युथनसिया(इच्छा-मृत्यु)

यदि मानव अपना जीवन जीने को संचालित करने में स्वायत्तता और आत्म-निर्णय का अधिकार रखता है तो क्या वह जहाँ तक संभव है, अपनी मृत्यु संबंधी परिस्थितियों को नियंत्रित करने का अधिकार भी रखता है? यदि ‘लोग जीने का अधिकार’ रखते हैं तो क्या वे उसी तरह ‘मरने का अधिकार’ भी रखते हैं? अथवा स्वाभिमान के साथ मृत्यु का अधिकार भी रखते हैं? गर्भपात और आनुवंशिकीय उतरदायित्व में एक विषय के रूप में यह प्रश्न उठता है कि किसी व्यक्ति के जीवन का मूल्य और गुणवत्ता निर्धारित करने केलिए अधिकृत कौन है? क्या इसका अधिकार राज्य,चिकित्सकीय पेशेवर,परिवार,व्यक्ति या इन सबका संघात रखता है? गर्भपात और ‘इच्छा-मृत्यु’ मानव जीवन के दो प्रारम्भिक और अंतिम सोपान हैं. गर्भपात का प्रश्न तब उठता है जब मानव जीवन शुरू होता है,*इच्छा-मृत्यु* का प्रश्न तब उठता है जब यह खत्म होता है.

 ‘यूथनसिया’ ग्रीक शब्द है जिसका शाब्दिक अर्थ ‘अच्छी मृत्यु’ है. हमारे समाज में अच्छीमृत्यु वह मानी जाती है जो दर्द-रहित और जल्दी हो जाती है. ज्यादातर लोग आशा करते हैं कि मृत्यु उनको व उनके प्रियजनों को होनेवाली दीर्घकालीन पीड़ा, उस पर होनेवाला बड़ा खर्चा और अस्पताल में लम्बे समय तक भर्ती होने से उसकी गरिमा को होनेवाले नुकसान से बचा जाये. चिकित्सकीय तकनीकी ने यह संभव बना दिया है कि व्यक्ति में जैविकीय जीवन बना रहे जो पहले से ही मर गया है. एक व्यक्ति जो असमाधेय कोमा में है, जिसका व्यक्तित्व पूरी तरह से ख़राब हो चुका है, जिसकी चेतना कष्टप्रद दर्द और दवाइयों आधारित जड़ता के विकल्पों के बीच अर्थपूर्ण जीवन और अनुभव की क्षमता खोदी है. बहुत से तर्क देते हैं कि ऐसे व्यक्तियों का मर जाना ज्यादा बेहतर है, यह दया एक तरह से मृत्यु की ओर होगी. कोई यह महसूस कर सकता है कि इस तरह के व्यक्तियों या इसे तरह की समान दशाओं में किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में मृत्यु तक पहुंचना जल्दबाजी होगी. यद्धपि, मृत्यु में सहायक बननेवाले कारक के रूप में काम करने के नैतिक निहितार्थ गहरे हैं. क्या किसी को आसान मृत्यु उपलब्ध करवाना आत्म-हत्या के समान है? यदि हम दूसरे की मृत्यु करने में किसी भी तरह की मदद करते हैं- कारण चाहे जो हों, क्या हमारा क्रिया हत्या का एक रूप है? क्या इस तरह की क्रियाएँ हमेशा न्यायसंगत हो सकती हैं?

 उपयोगितावादी तर्क देते हैं कि एक ऐसे व्यक्ति जिसने अर्थपूर्ण जीवन जीने की क्षमता खोदी है, स्वास्थ्य सुधार संबंधी स्रोतों को बढ़ाना अनुचित है. फलनिरपेक्षतावादी यूथनसिया के समर्थन में हैं जिनकी ‘इच्छामृत्यु’ की संकल्पना व्यक्ति विशेष की *मानवीय अस्मिता के सम्मान* की नैतिकता से उत्पन्न होती है. मरीज जो अपने दर्द को खत्म करने का निवेदन कर रहा है तो उसकी चयन की आजादी का सम्मान करना चाहिए. दूसरे जो अपने चयन को अभिव्यक्त नहीं कर सकते हैं, उन्हें इस आधार पर मरने की स्वीकृति दे देनी चाहिए कि गरिमापूर्ण मानव जीवन जीने केलिए गुणात्मक जीवन की कुछ न्यूनतम कसौटी होती हैं.

 दार्शनिक *‘मार दो और मरने दो’* अथवा *‘सक्रिय बनाम निष्क्रिय’* यूथनसिया में अंतर करते हैं. पहले में मृत्यु में सहायता करने जैसा कार्य करना है उदाहरण केलिए जान लेवा इंजेक्शन लगाना, जबकि दूसरे में जीवन को बनाये रखने वाले कार्यों जैसे एंटीबायोटिक दवाएं, रोक देना है. अमेरीकी चिकित्सा संघ की नैतिक संहिता ने यूथनसिया की नैतिकता संबंधी विशिष्ट और मानक दृष्टिकोण का समर्थन किया. यह दृष्टि बनाई गई कि निष्क्रिय यूथनसिया (विशेष दशाओं में) नैतिक रूप से स्वीकार्य है किन्तु सक्रिय यूथनसिया कभी स्वीकार्य नहीं है. कुछ चिंतक *सक्रिय बनाम निष्क्रिय*  का भिन्न अर्थ करते हैं. वे यूथनसिया शब्द का उपयोग ऐसी क्रियाओं केलिए करते हैं जो व्यक्ति की मृत्यु में सहायक बनती हैं. जिसे दया-मृत्यु भी कहा जाता है. किसी को मरने की इजाजत देना यूथनसिया नहीं माना जा सकता.

 और यह भी विवाद है जो जीवन को बनाये रखने वाले साधारण और असाधारण साधनों के इर्दगिर्द घूमता है. कुछ का विश्वास है कि जीवन में सहायक असाधारण साधनों को प्रदान करना अथवा रोकना नैतिक रूप से सही है. (श्वांसयंत्र पर रखना) किन्तु साधारण इलाज़ से बचना उचित नहीं है. किन्तु इस अंतर को लागू करने का प्रयास समस्यात्मक हो सकता है, क्योंकि असाधारण साधनों की व्याख्या को लेकर कठिनाई है. जैसे एक समय में हेमोडायलिसिस, कोरोनरी बाईपास सर्जरी बिरले ही होती थी, किन्तु अब रोजमर्रा की चीज बन गई है. यदि कोई डॉक्टर गंभीर रूप से अपूर्ण नवजात शिशु जो दूसरे कारण से मरने जैसा है, के आंत्र में खराबी की सही शल्यचिकित्सा करने के काम में असफल हो जाता है तो डॉक्टर की शल्यक्रिया को साधारण या असाधारण इलाज, में से किसमें माना जाये? क्या डॉक्टर के ऑपरेशन न करने का कार्य यूथनसिया है?

 अभी भी कुछ का तर्क है कि जीवन सहायक (बटन को खींचना) असाधारण साधन को रोकना और इस तरह के साधनों से इलाज करना, के बीच नैतिक अंतर विधमान है. वे पहले अर्थात् सक्रिय यूथनसिया( मारने) को शामिल करते हैं, बादवाले को नहीं. कम विवादास्पद भेद स्वैच्छिक और अनैच्छिक यूथनसिया के बीच अंतर के इर्दगिर्द है. अनैच्छिक यूथनसिया तब होता है जब व्यक्ति ‘सूचित सहमति’ देने में असमर्थ है जबकि इच्छित यूथनसिया में व्यक्ति द्वारा पहले से ही स्वीकृति दी हुई होती है. अनैच्छिक यूथनेसिया के मामले उन वयस्कों के साथ उठते हैं जो (निद्रा या मूर्च्छित) असक्षम हैं. अनैच्छिक यूथनसिया के प्रश्न गंभीर रूप से विकृत नवजातों के सम्बन्ध में भी उठते हैं.

 दूसरी समस्या चिकित्सकीय तकनीकी के विकास के कारण क्षत रोगी की जैविकीय मृत्यु को बनाये रखने की क्षमता के विकास से सम्बन्धित है. रोगी मस्तिष्क रखता है. काम करने में पूरी तरह अक्षम है. (ब्रेन डेथ) किन्तु उनकी ह्र्दय की गति और श्वांस यांत्रिक ढंग से बने हुए है. कुछ मामलों में प्रममष्तिकीय छाल (cerebral cortex) या उच्च मस्तिष्क गंभीर रूप से क्षतिग्रस्त है किन्तु ह्र्दय-गति और श्वांस तंत्र को मस्तिष्क नली (ब्रेन स्टेम) बनाये रख सकती है. दूसरा समूह स्थाई रूप से निष्क्रिय अवस्था में है. इन दोनों समूहों मेसे एक व्यक्ति संज्ञानात्मक योग्यता और चेतना की असुधार्य स्थिति से पीड़ित है. इस तरह के व्यक्ति को क्या जीवित मानना चाहिए या मृत मानना चाहिए? और चिकित्सकीय उपचार नैतिक रूप से क्या निर्देशित करता है?

 कुछ चिंतक मृत्यु के मानक को पुनः:परिभाषित करने की मांग करते हैं. परंपरागत रूप से, मृत्यु तब मानी जाती है जब ह्र्दय- गति और श्वांस तंत्र पर स्थाई रूप से विराम लग जाता है. इस मापदंड के अनुसार, मस्तिष्क-मृत्यु वाला रोगी जीवन-रक्षक साधनों से जिन्दा है. हार्वर्ड चिकित्सकीय स्कूल में गठित कमेटी ने इस मसले पर एक रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसका प्रकाशन 1968 में चिकित्सकीय संगठन की पत्रिका में किया गया. कमेटी ने सम्पूर्ण मस्तिष्क की स्थायी रूप से काम करने से रुकना या मस्तिष्क-मृत्यु संबंधी दशा की शिनाख्त करने केलिए जाँच की. कमेटी ने शिफारिश की कि इस तरह की दशा में रोगी को मृत मान लेना चाहिए और जीवन-रक्षक तंत्र को हटा देना चाहिए. दूसरे,शब्दों में, ह्र्दय-गति व श्वसन-तंत्र के कार्य करने के बावजूद भी मृत्यु हो गई.

 मृत्यु की पुनर्परिभाषा ने इच्छा-मृत्यु के सम्बन्ध में हमारे दृष्टिकोण पर गहरा प्रभाव डाला है. यदि व्यक्ति जीवन-रक्षक तंत्र हटाने से पहले ही मर जाता है तो यह क्रिया सक्रिय अथवा निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु का, कोई रूप नहीं मानी जाती है. यद्धपि, यदि मस्तिष्क-मृत्यु का रोगी जीवन-रक्षक तंत्र के हटाने के बाद भी जिन्दा है तो यह सक्रिय या निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु कहलायेगी या नहीं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि किस इनको परिभाषित करने की किस तरह की शर्तें बनाई गई हैं. इसके अतिरिक्त, जिस तरह से मृत्यु को परिभाषित किया गया है, वह प्रत्यारोपण केलिए कटाई के अंगों के अभ्यास को प्रभावित करता है, अगर एक मस्तिष्क रोगी जीवित है, तो महत्वपूर्ण अंगों को हटाना मौत का आंशिक कारण है और नैतिक रूप से समस्याग्रस्त है. दूसरी ओर, यदि रोगी पहले से ही मर चुका है और रोगी की सहमति पहले से ही मिली हुई है तो इस तरह की समस्या उठेगी ही नहीं. ========================

कृत्रिम साधनों द्वारा जीवित रखे जाने की सम्भावना से बचने केलिए या वीर को अपनी इच्छा व्यक्त करने केलिए एक जीवित इच्छा शक्ति बनाना चाहिए, जिसे वे कभी अक्षम होने चाहिए. जब बहुत से राज्यों में कोई वैधानिक बंधन नहीं है, जीवित इच्छाशक्ति परिवार के सदस्यों की तरह चिकित्सकीय पेशे केलिए भी दिशा-निर्देशक करता है. यह उनको दूसरों के आधार पर युथनसिया निर्णय के पीड़ादायक उतरदायित्व से मुक्त करती है.

 हाल के वर्षों में,इच्छा-मृत्यु के सम्बन्ध में कानून को लेकर अनेक देशों में एक बहस छिड़ी हुई है. अधिकांश प्रस्तावों में बिना स्वैच्छिक या अस्वैच्छिक युथनसिया की वकालत किये, किसी व्यक्ति के मरने की अनुमति के अधिकार को स्थापित करने की मांग की गई है. आलोचक चेतावनी देते हैं कि निष्क्रिय युथनसिया को क़ानूनी मान्यता देना सक्रिय युथनसिया का मार्ग-प्रशस्त करता है. कुछ चिंतक जो ऐच्छिक-मृत्यु को क़ानूनी रूप से पास करने का विरोध करते हैं, यह मानते हैं कि यह अपने आप में अनैतिक है. दूसरे विश्वास करते हैं कि किसी मामले-विशेष में यह नैतिक रूप से स्वीकार्य हो सकता है किन्तु इसके दुरुपयोग के खतरे को देखते हुए उसे सामाजिक नीति के रूप में बनाने का विरोध करते हैं. वे सुझाव देते हैं कि इस तरह की नीति मानव जीवन की गरिमा को कमतर कर देती है. इस तरह का व्यवहार न केवल मूर्च्छित की अवस्था में अनैच्छिक सक्रिय इच्छा-मृत्यु को वैधानिक बनाने का मार्ग प्रशस्त करती है अपितु उन लोगों पर भी लागू करने का खतरा बढ जाता हैं जो सामाजिक रूप से अनचाहे समझे जाते हैं.

 इच्छा-मृत्यु का मसला स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध करवाने वालों केलिए गंभीर नैतिक दुविधा उत्पन्न करता है. परम्परागत रूप से, चिकित्सकीय पेशे का बुनियादी सिद्धांत है- *नुकसान नहीं पहुँचाना.* हिप्पोक्रेटिक शपथ कहती है कि एक चिकित्सक किसी भी व्यक्ति को न तो मृत्यु को बढ़ावा देनेवाली दवा देगा और न ही इसके लिए सुझाव देगा. इसी शपथ में, एक चिकित्सक रोगी को किसी भी तरह के नुकसान और अन्याय से दूर रखेगा. पहला सिद्धांत अमरीकी चिकित्सकीय एसोसिएशन (AMA) की नैतिक संहिता द्वारा समर्थित है कि “ एक चिकित्सक को मानवीय गरिमा के प्रति करुणा व सम्मान रखते हुए अपनी पूरी क्षमता के साथ चिकित्सकीय सेवाएँ उपलब्ध करवाने हेतु समर्पित रहेगा”. रोगियों को किसी भी प्रकार के अन्याय से रक्षा करने और उनकी गरिमा के प्रति सम्मान और करुणा के साथ उनकी देख-भाल करना इच्छा-मृत्यु केलिए नैतिक पृष्ठभूमि उपलब्ध करवाता है. यदि रोगी की दशा क्रमशः इस हद तक खराब हो गई है कि जीवन अर्थहीन या असहनीय बन जाता है, तो क्या पेशेवरों का कर्तव्य न्याय,करुणा व मानवीय गरिमा की मांग के तहत उसके इस तरह के जीवन का रक्षण करना चाहिए ? इस तरह के मामलों में रोगी की मरने में मदद करना न केवल नैतिकता की दृष्टि से स्वीकार्य है अपितु मानवीय व्यवहार के आधार पर भी आवश्यक लगती है.

 निम्नलिखित लेख में जेम्स् रचेल्स परम्परागत दृष्टि जो सक्रिय इच्छा-मृत्यु का समर्थन करती है जबकि निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु की निंदा करती है, का परीक्षण करते हैं. वह तर्क देता है कि सक्रिय इच्छा-मृत्यु निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु से प्राय: ज्यादा मानवीय है. यह एक महत्वपूर्ण विचार है, जब करुणा इच्छा-मृत्यु केलिए बुनियादी कारण है. रचेल्स परम्परागत दृष्टि को स्वीकार करने को चुनौती देते हुए तीन दूसरे आधार देते हैं. और चिकित्सकों से इसकी नैतिक बाध्यता पर पुनर्विचार करने का आग्रह करते हैं.

 दूसरे लेख में, चिकित्सक डेविड हेल्लेरस्टाइन ऐसे गंभीर लोगों केलिए जिनका शारीरिक अस्तित्व अनिश्चित काल तक जारी रखा जा सकता है. किन्तु उनके जीवन की गुणात्मकता असहनीय है, में चिकित्सकीय तकनीकों के प्रति उपयोग के खिलाफ तर्क देते हैं. हेल्लेरस्टाइन सुझाव देते हैं कि तकनीकी समाधान पर अतिविश्वास करने के क्रम में, चिकित्सकीय विधार्थियों को रोगी की इच्छा का ध्यान रखने और उनके साथ सम्प्रेषण करने का प्रशिक्षण भी देना चाहिए, विशेष रूप से अंतिम साँस ले रहे बीमार और उसके परिजनों के साथ. इसको अंजाम देनेवाले चिकित्सकों को भी चाहिए कि वे अस्पताल या चिकित्सकीय संगठनों द्वारा सभा-सम्मेलन आयोजित कर लोगों को ‘तकनीकीय अतिमृत्यु’ से बचने केलिए सलाह दें. लेखक का तीसरा प्रस्ताव संस्थाओं केलिए है कि उनकी तकनीकी मूल्यांकन टीम चिकित्सकों और रोगियों के इलाज के उद्देश्यों को बताने में मदद करें और तकनीकी के उपयोग का मूल्यांकन करें.

 *जेम्स् रचेल्स का मामला:*

**सक्रिय और निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु :**

 चिकित्सकीय नीतिशास्त्र केलिए सक्रिय और निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु के बीच भेद का विचार काफी महत्वपूर्ण है. सोचा यह है कि कुछ मामलों में यह स्वीकृति है कि उपचार को रोक दिया जाये और रोगी को मरने की स्वीकृति दे दी जाये. किन्तु यह कभी भी रोगी को सीधे मारने के कृत्य को स्वीकार नहीं कर सकता. यह सिद्धांत ज्यादातर चिकित्सकों द्वारा स्वीकार्य लगता है और इसका समर्थन दिसम्बर 4,1973, में अमेरिकन चिकित्सकीय एसोशिएशन के प्रतिनिधियों द्वारा इस वक्तव्य के साथ किया गया कि:

 *“इरादतन रूप से किसी किसी भी व्यक्ति के जीवन को दूसरे द्वारा दयामृत्यु करना उसके खिलाफ है जिसके लिए चिकित्सकीय पेशा खड़ा है और अमेरिकी चिकित्सकीय नीति के खिलाफ है. शरीर को दीर्घकालीन रखने केलिए असाधारण तरीकों को रोक देना जब यह पक्के सबूत मिल जाएँ कि रोगी और उसके परिजनों के निर्णय है कि उसके किए जैविकीय मृत्यु श्रेष्ठ है. चिकित्सक की सलाह और निर्णय रोगी और उसके निकट के परिजनों को नि:शुल्क उपलब्ध होने चाहिए.”*

 यद्धपि, एक इस सिद्धांत के खिलाफ एक मजबूत मामला बनाया जा सकता है. इस सम्बन्ध में मैं कुछ प्रासंगिक तर्क दूंगा और इस मामले पर डॉक्टर से उनके दृष्टिकोण पर पुनः विचार करने का निवेदन है.

 एक इसी तरह की स्थिति से हम शुरू करते हैं. एक रोगी जो गले के असाध्य कैंसर से पीड़ित है और भयानक दर्द का शिकार है, जिसको लम्बे समय तक संतोषजनक ढंग से कम नहीं कर सकते. यदि उसका वर्तमान उपचार जारी रखें तो भी उसका कुछ ही दिनों में मरना तैय है. किन्तु वह उन दिनों तक भी जिन्दा नहीं रहना चाहता है क्योंकि दर्द असहनीय है. इसलिए उसने चिकित्सक को इसको अंत करने केलिए कहा और उसके परिवार ने भी उसके इस निवेदन का समर्थन किया. मान लीजिए चिकित्सक इलाज को रोकने केलिए सहमत हो गया, जैसा कि परम्परागत दृष्टिकोण कहता है कि उसे करना चाहिए. ऐसा करने का औचित्य यह है कि रोगी भयंकर यंत्रणा में है और वह किसी भी तरह से मरना चाहता है. इसलिए उसके दर्द को दीर्घकालीन बनाना गलत और अनावश्यक है. किन्तु अब यहाँ यह देखना जरुरी है कि यदि कोई उपचार को रोक देता है तो यह रोगी की मृत्यु का ज्यादा समय ले सकता है. इसलिए, यदि सीधा कोई क्रिया की गई तो वह ओर अधिक पीड़ा सहन कर सकता है और यह सोचकर प्राणघातक इंजेक्शन दिया. यह तथ्य यह सोचने का मजबूत आधार देता है कि यदि उसकी पीड़ा को बनाये रखने का प्रारम्भिक निर्णय लिया गया है तो, सक्रिय इच्छा-मृत्यु निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु से बेहतर है. नहीं तो इस विकल्प का समर्थन करना है जो पीड़ा को कम करने की बजाय बढ़ाता है और मानवीय आवेग के विपरीत है जो जीवन को लम्बा नहीं करने का संकेत देता है.

 मेरी राय का महत्वपूर्ण हिस्सा यह है कि ‘मरने की इजाजत देने’ की प्रक्रिया धीमी और दर्द कारक है, जबकि प्राणघातक इंजेक्शन देना तुलनात्मक रूप से कम पीड़ादायक और शीघ्र मुक्तिवाला है. भिन्न प्रकार का दूसरा एक उदाहरण और देता हूँ. सयुंक्त राज्यों में लगभग 600 बच्चों ने डाउनसिन्ड्रोम के साथ जन्म लिया. इसके अलावा वैसे ये सभी बच्चे स्वस्थ थे. जो केवल सामान्य बाल देखभाल की जरूरत रखते थे. अन्यथा उनका सामान्य बचपन था. कुछ, यद्धपि जन्मजात विकृतियों जैसे आंत अवरोधक से पीड़ित थे जिनको यदि वे जिन्दा रहते तो ऑपरेशन की जरूरत थी. कभी-कभी माता-पिता और चिकित्सक ऑपरेशन नहीं करना तैय करेंगे और नवजात को मरने देते हैं. एंथोनी शाह फिर क्या होता है इसका वर्णन करते हैं:

 “जब ऑपरेशन केलिए डॉक्टर मना कर देता है तो बच्चे को दर्द की पीड़ा से मुक्ति की कोशिश करनी चाहिए. जब प्राकृतिक शक्तियां बच्चों की ज़िन्दगी को कमजोर कर रही हैं. एक चिकित्सक के रूप में जिसका स्वभाविक झुकाव मृत्यु लड़ने का सिर की खाल (Scalpel),खड़ा है और देख रहा है बचाया हुआ बच्चा मर रहा है. यह बहुत भावात्मक क्षण अनुभव होता है. मैं जानता हूँ कि इस पर संगोष्ठी, सम्मेलनों, सैधांतिक बहसों में बात करना आसान है कि इस तरह के नवजातों को मरने की इजाजत दे दी जाये. यह मेरे और अस्पताल स्टाफ, और इन सबसे ज्यादा माता-पिता जो कभी नहीं नर्सरी में आये.

 मैं समझता हूँ कि क्यों कुछ लोग तमाम किस्म की इच्छा-मृत्यु का विरोध करते हैं और जोर देते हैं कि इस तरह के नवजातों को मरने की इजाजत दे देनी चाहिए. मैं यह भी समझ सकता हूँ कि क्यों दूसरे लोग इस तरह बच्चों को तुरंत और दर्दरहित मारने के पक्ष में रहते हैं.==================== ( सक्रिय और निष्क्रिय में जब जानबूझकर उपचार रोक दिया जाता है दोनों के बीच आन्तरिक नैतिक मूल्य की दृष्टि से मुश्किल से ही अंतर किया जा सकता है. (कार्य करो या बचो)).

 मेरा दूसरा तर्क यह है कि जीवन और मृत्यु संबंधी परम्परागत सिद्धांत किस तरह से अप्रासंगिक आधारों पर खड़ा है.

 मान लीजिए डाउनसिन्ड्रोम नवजातों का मामला है जिनको अपनी जन्मजात अपूर्णताओं केलिए जो सिन्ड्रोम से असम्बद्ध है, जिन्दा रहने केलिए ऑपरेशन की जरूरत रखते हैं. कभी-कभी कोई ऑपरेशन नहीं होता है और बच्चे मर जाते हैं किन्तु जब इस तरह की कोई विकृति नहीं होती है जो बच्चे जिन्दा रहते हैं. अब, आंत्र अवरोधक को हटाने केलिए ऑपरेशन करना कोई मुश्किल कार्य नहीं है. किन्तु इस तरह के मामलों में इस तरह के ऑपरेशन क्यों नहीं किये जाते हैं, इसका कारण साफ है की डाउन सिन्ड्रोम के शिकार बच्चों के माता-पिता और डॉक्टर इस तथ्य के कारण यह निर्णय ले लेते हैं कि उनके बच्चे का मरना ही ज्यादा ठीक है.

 किन्तु ध्यान रहे. यह स्थिति बेतुकी है क्योंकि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है कि कोई इस तरह के बच्चों के जीवन और संभावनाओं के बारे में क्या दृष्टिकोण रखता है. यदि इस तरह के नवजात के जीवन का संरक्षण कीमती है फिर इस पर क्या बहस है कि इसके लिए यदि वह साधारण ऑपरेशन की जरूरत रखता है तो किया जाये? अथवा कोई यह सोचता है कि यह अच्छा होगा कि इस तरह बच्चे को जीवित नहीं रहना चाहिए,तो इसे क्या फर्क पड़ता है कि यह एक अबाधित आंत्र प्रणाली है. इसके साथ-साथ, जीवन और मृत्यु संबंधी मामले का निर्णय अप्रासंगिक आधारों पर लिया गया है. यहाँ मुद्दा आंत्र का नहीं, डाउन सिन्ड्रोम का है. मुद्दे का निर्णय केवल इस आधार पर ही करना चाहिए था,जिसमें दूसरे अप्रासंगिक प्रश्नों के कि आंत्र प्रणाली अवरुद्ध है की नहीं, पर निर्भर होने की स्वीकृति नहीं दी जाये.

 यदि स्थिति क्या दर्शाती है, बेशक, इसके पीछे विचार यह है कि जहाँ आंत्र रुकावट हो, तो बच्चे की मरने देना चाहिए. कितु जहाँ इस तरह की समस्या नहीं है, तो कुछ भी नहीं करना चाहिए,किसी को *मारना* नहीं चाहिए. वस्तुतः इस तरह की सोच जब अनुचित आधारों पर जीवन और मरण का निर्णय करती है और इस तरह के परिणामों को बढ़ाती है तो यह दूसरा कारण है कि सिद्धांत को क्यों ख़ारिज किया जाना चाहिए?

 यह एक कारण है कि क्यों कुछ लोग सोचते हैं कि सक्रिय और निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु में महत्वपूर्ण नैतिक भिन्नता है. वे सोचते हैं कि ‘*किसी को मारना’* नैतिक रूप से ‘*किसी को मरने देने’*  से ज्यादा अनुचित है. किन्तु क्या ऐसा है? क्या ‘मारना’ अपने आप में किसी को ‘मरने’ देने से ज्यादा खराब स्थिति है? इसकी जाँच करने केलिए दो मामलों पर सोचा जाना चाहिए. दोनों मामले एक ही तरह के हैं. सिवाय इसके की एक मारने में शामिल है, जबकि दूसरा मरने देने में शामिल है. फिर सवाल उठेगा कि क्या इस तरह की भिन्नता इनके नैतिक मूल्यांकन में कोई अंतर करती है? यहाँ यह महत्वपूर्ण है कि इस तरह के मामले पूरी तरह से समान हैं सिवाय इस एक भिन्नता के, और चूँकि कोई भी आश्वस्त नहीं होता है कि इन दो मामलों में कोई अंतर है. इसलिए, इनको देखना बेहतर है.

 प्रथम में, स्मिथ विरासत में बहुत कुछ हासिल कर लेता है यदि उसका 6 साल का चचेरा भाई नहीं रहता है. एक श्याम जब बच्चा नहा रहा था, स्मिथ स्नान-घर में गया और बच्चे को डुबो दिया और फिर इस तरह से चीजों को जमा दिया जैसे एक हादसा लगेगा.

 दूसरे मामले में, जॉन भी विरासत में कुछ हासिल करता है, यदि उसके 6 वर्षीय चचेरे भाई के साथ कुछ हो जाता है. स्मिथ की तरह जॉन भी उसको डुबाने की योजना बना रहा था. यद्धपि, जैसे ही वह स्नानघर में गया, जॉन ने देखा कि बच्चा फिसल गया और उसका सर टकरा गया और पानी में गिर गया. जॉन प्रसन्न था और खड़ा रहा. वह इसके लिए तैयार था कि यदि जरूरत हुई तो उसका सर पुनः पानी में धकेल देगा. किन्तु इसकी जरूरत नहीं पड़ी. बच्चे का इस तरह से मर जाना महज एक हादसा था, जिसको जॉन ने देखा और कुछ नही किया.

 इन दोनों उदाहरणों में स्मिथ ने बच्चे को मारा जबकि जॉन ने महज इसे मरने दिया. दोनों के बीच मात्र यही अंतर है. क्या इन मेसे एक व्यक्ति ने नैतिक रूप से ज्यादा अच्छा किया है? यदि मारने और मरने देने में अंतर अपने आपमें नैतिक रूप से महत्वपूर्ण है तो कोई कह सकता है कि जॉन का व्यवहार स्मिथ से ज्यादा निंदनीय है. किन्तु क्या हम यही कहना चाहते हैं? मैं समझता हूँ कि नहीं. प्रथमत: दोनों व्यक्तियों के कार्य का एक ही मंतव्य था (निजी स्वार्थ की पूर्ति) और दोनों अपनी सोच में एक ही लक्ष्य प्राप्त करना चाहते थे. स्मिथ के व्यवहार के बारे में यह कहा जा सकता है कि वह एक बुरा व्यक्ति था, यद्धपि यह निर्णय भी बदल सकता है जब ओर कुछ तथ्यों को जाना जाये, उदाहरण केलिए, वह मानसिक रूप से बीमार व्यक्ति है. किन्तु क्या यह वही चीज नहीं है जो जॉन के व्यवहार में है? और इस तरह के निर्णय को बदलने केलिए क्या कुछ ओर तथ्यों को देखा जाना चाहिए? इसके साथ ही, मान लीजिए जॉन अपने बचाव की सफाई में कहता है कि वस्तुतः मैंने इसके अतितिक्त कुछ नहीं किया कि मैं वहां खड़ा था और मैंने बच्चे को डूबते हुए देखा. मैंने उसे मारा नहीं, केवल मरने दिया. यदि किसी को मरने देने से ज्यादा अपने आप में ख़राब मार देना है तो यह तर्क अपने बचाव में कुछ महत्व रखता है. किन्तु ऐसा नहीं है. इस तरह का बचाव नैतिक विवेक की भद्दी विकृति है. नैतिक रुप से कहा जाये तो यह कोई बचाव नहीं है.

 किन्तु इच्छा मृत्यु के सन्दर्भ में जिसे डॉक्टर का वास्ता है, इस तरह का मामला नहीं है. डॉक्टर किसी भी तरह के निजी स्वार्थ पूर्ति अथवा स्वस्थ बच्चे को खत्म करने में शामिल नहीं है. डॉक्टर केवल उन्हीं मामलों से वास्ता रखते हैं जहाँ रोगी का आगे का जीवन भयानक पीड़ादायक बन गया है या बननेवाला है. यद्धपि, इन मामलों में भी मुद्दा वही है, मरने और मार देने के बीच महज अंतर, अपने आप में, नैतिक अंतर नहीं करता है. यदि एक चिकित्सक मानवीय आधार पर रोगी को मरने देता है तो वह उसी स्थिति में है जब यदि वह रोगी को मानवीय कारणों से प्राणघातक इंजेक्शन देता है. यदि उसका निर्णय गलत है,उदाहरण केलिए, यदि रोगी की बीमारी का वस्तुतः इलाज संभव है तो प्रश्न समान रूप से पछतावा करने योग्य है. फिर इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है कि ऐसा करने में कौनसी पद्धति का इस्तेमाल किया गया है. यदि चिकित्सक का निर्णय सही था, तो पद्धति अपने आप में महत्वपूर्ण नहीं है.

 अमेरिकी चिकित्सकीय एसोशिएशन के नीति वक्तव्य बहुत ही साफतौर से चिकित्सकीय साध्य मामले पृथक् रखते हैं: साध्य मुद्दे “एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति के जीवन का इरादतन अंत करना है”. किन्तु इस मुद्दे को पहचानने के बाद और ‘दया-मृत्यु’ के विरोध के बाद वक्तव्य में इस चीज से इंकार किया गया कि उपचार का अंत जीवन का इरादतन अंत करना है. यही वह स्थिति है जहाँ गलती होती है. इन परिस्थितियों में यदि यह एक व्यक्ति द्वारा दूसरे व्यक्ति के जीवन को इरादतन खत्म करना नहीं है तो उपचार को रोकना क्या है? बेशक, यह वही है और यदि यह नहीं है तो कोई बात ही नहीं रह जाती है.

 बहुत से लोग इस निर्णय को मुश्किल से ही स्वीकार कर पाते हैं. मैं समझता हूँ कि एक कारण यह है कि इस प्रश्न को कि क्या मारना मरने देने की बजाय ज्यादा खराब है और इस भिन्न प्रश्न को कि मारने के वास्तविक उदाहरण मरने देने से ज्यादा निंदनीय हैं, के साथ आसानी से मिला देना है. मारने के वास्तविक मामले स्पष्ट रूप से भयावह होते हैं( उदाहरण केलिए तमाम हत्यारे जो अख़बार में रिपोर्ट करते हैं.) और हम रोज इस तरह की घटनाएँ सुनते हैं. दूसरी ओर, हम मुश्किल से ही मरने देने के मामले सुनते हैं. सिवाय एक चिकित्सक के जो मानवतावादी कारणों से प्रेरित है. इसलिए सोच सकते हैं कि ‘मारना’ मरने देने से कम खराब है. किन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मारने में अपने आप में कुछ है जो मरने देने से ज्यादा खराब है, इन मामलों में महज मारने और मरने देने का ही अंतर नहीं है. बल्कि दूसरे कारक- उदाहरण केलिए, हत्यारों का प्रेरक कारक (निजी उपलब्धता का होना) डॉक्टर के मानवतावादी प्रेरक कारक के विपरीत है जो भिन्न मामलों में भिन्न प्रतिक्रिया की व्याख्या है.

 मेरा मानना है कि मारना मरने देने की बजाय अपने आप में ज्यादा खराब नहीं है. यदि इरादा सही है तो यह निगमित करता है कि सक्रिय इच्छा-मृत्यु निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु से ज्यादा खराब नहीं है. दूसरी तरफ से क्या तर्क दिए जाते हैं? मेरा विश्वास है कि सबसे लोकप्रिय यह है कि –

*“सक्रिय और निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु में महत्वपूर्ण अंतर यह है कि निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु में चिकित्सक रोगी की मृत्यु होने के लिए कुछ भी नहीं करता है. और रोगी अपनी बीमारी की स्थिति से अपने आप मर जाता है. सक्रिय इच्छा-मृत्यु में चिकित्सक रोगी की मृत्यु होने के लिए कुछ करता है, वह उसे मारता है. एक चिकित्सक जो कैंसर के रोगी को जान लेवा इंजेक्शन लगाता है तो उसकी मृत्यु का कारण बनता है. यदि वह केवल उपचार को ही रोक देता तो कैंसर उसकी मृत्यु का कारण बनता है”.*

इस संदर्भ में, कई तरह के बिंदु विचारणीय हैं. प्रथम, तो यह कि यह कहना अपने आप में सही नहीं है कि निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु में डॉक्टर कुछ नहीं करता है. वह एक काम करता है जो बहुत महत्वपूर्ण है कि वह रोगी को मरने देता है जो किसी को मरने केलिए छोड़ देना से भिन्न है.======================

उदाहरण केलिए, कोई रोगी को दवाई नहीं देने के तरीके से मरने दे सकता है, ठीक वैसे ही जैसे कोई किसी भी बेइज्जती करने केलिए उसे हाथ नहीं मिलाने का तरीका अपनाता है. किन्तु फिर भी किसी भी तरह के नैतिक मूल्यांकन के उद्देश्य केलिए कार्य का एक प्रकार है. इस रूप में यह निर्णय कि रोगी को *मरने दो,* का निर्णय भी वैसे ही नैतिक मूल्यांकन का विषय है. इसका मूल्यांकन सही-गलत , अच्छा-बुरा,दयालु-परपीड़क के रूप में हो सकता है. यदि एक चिकित्सक ऐसे रोगी को जानबूझकर मरने देता है जो ठीक होनेवाली साधारण बीमारी से पीड़ित है तो चिकित्सक को नि:संदेह उसके किये कार्य केलिए ठीक वैसे ही दोषी ठहराया जाना चाहिए जैसे रोगी को अनावश्यक रूप से मारने केलिए ठहराया जाता है. तब उसके खिलाफ आरोप संगत होते हैं. यदि ऐसा है तो इन सबसे बचाव की इस याचना का कोई आधार नहीं रह जाता है कि उसने कुछ नहीं किया. वस्तुतः उसने गंभीर किया है जिसकी वजह से उसने रोगी को मरने दिया.

 मृत्यु का कारण निर्धारित करना क़ानूनी रूप से महत्वपूर्ण बिंदु है क्योंकि यह निर्धारित करता है कि चिकित्सक के खिलाफ ‘आपराधिक आरोप’ लगाया जाये या नहीं. किन्तु मैं नहीं समझता हूँ कि इस अवधारणा का उपयोग सक्रिय और निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु के बीच नैतिक अंतर करने में हो सकता है. कारण यह है कि किसी की मृत्यु का कारण बनना इसलिए बुरा है कि मृत्यु को एक बड़ी बुराई माना गया है और इसलिए ऐसा है. यधपि, यदि यह निश्चित किया जाता है कि इच्छा-मृत्यु यहाँ तक कि निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु कुछ मामलों में वांछनीय है,तो यह भी निश्चित करता है कि इस मामले में, रोगी की मृत्यु को बुराई उसको जिन्दा रखने की बुराई से बड़ी नहीं है. और यदि यह ===========

 अंततः, चिकित्सक सोच सकता है कि ये सब केवल अकादमिक रूचि के मामले हैं, जिनके बारे में दार्शनिक अक्सर चिंतित रहते हैं. किन्तु यह सब उनके कार्य में व्यावहारिक नहीं हैं. आखिरकार, चिकित्सकों को वे जो कुछ भी करते हैं उनके क़ानूनी परिणामों के बारे में वास्ता रखते हैं और सक्रिय इच्छा-मृत्यु पूरी तरह से क़ानूनी रूप से वर्जित है. किन्तु यहाँ तक कि चिकित्सकों को इस तथ्य से भी वास्ता रखना चाहिए कि कानून उनके ऊपर नैतिक सिद्धांत थोपता है जो कि ==========

बेशक, अब बहुत से चिकित्सक इस स्थिति में नहीं हैं कि इस मामले में वे प्रताड़ित हैं. वे अपने आपको केवल जो कुछ कानून कहता है, के साथ नहीं जाते हैं. बल्कि, जैसा कि अमेरिकी चिकित्सकीय संस्थान का वक्तव्य है, उन्होंने इसे चिकित्सकीय नीतिशास्त्र के केन्द्रीय सिद्धांत के रूप में समर्थन किया. इस कथन में, सक्रिय इच्छा मृत्यु की महज क़ानूनी दृष्टि से ही भर्त्सना नहीं की अपितु इस दृष्टि से भी कि यह चिकित्सकीय पेशा जिसके लिए वे हैं, के विपरीत है. जबकि निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु अनुमोदित है. यद्धपि, पूर्ववर्ती विचार दिखाते हैं कि वस्तुतः इन दोनों के बीच अपने आप में कोई नैतिक अंतर नहीं है,( उनके परिणामों में कई बार कुछ मामलों में महत्वपूर्ण नैतिक अंतर होता है. किन्तु जैसा कि मैंने दिखाया, ये अंतर दर्शाता है कि नैतिक रूप से निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु से सक्रिय इच्छा-मृत्यु बेहतर है.) इसलिए, यदि डॉक्टर सक्रिय और निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु में अंतर करते हैं तो यह केवल कानून को संतुष्ट करता है, इससे ज्यादा कुछ नहीं है.

***डेविड हेलेसटर्न*** ---

चिकित्सकीय तकनीकी की अधिमात्रा ----

 कुछ वर्ष पूर्व जब मैं चिकित्सा स्कूल में था, मैंने रविवार श्याम का एक लम्बा समय खून के थेलों को दबाने में बिताया. उस समय में शल्य- कक्ष की सेवा में था. और शल्य-चिकित्सक बनने का आधा दिमाग बन चुका था. क्या मुझे काटना-सिलाई करना , ऑपरेशन-कक्ष की तरफ जल्दी से भागना और रोग काटने के बाद सर्वशक्तिमान होने की भावना और पीछे जो कुछ बचा है उसके टांका लगाना पसंद था.

 इस विशेष रविवार को, एक बूढ़े शराबी को लगभग मरने की अवस्था में आपातकालीन कक्ष में लाया गया. उसका नाम कालिस्की था और उसका फूला हुआ पेट अत्यंत कठोर था. ========कुछ भी किये जाने का कोई प्रश्न ही नहीं था. रेजिडेंट डॉक्टर और नर्सों की उत्साहित राय ने उसको आपातकालीन कक्ष में ले लिया. जैसे ही अंत:शिरा लाईन शुरू की, खून निकलने लगा और नाल-सलाका (Catheters) पेट और मूत्राशय में से पास किया. शीघ्र ही वृद्ध काल्सकी को ऑपरेशन कक्ष में ले लिया. उसके पेट के बाल मुंडे और ऑपरेशन के कपड़े पहनाए और कुछ ही मिनटों में शल्य-चिकित्सक ने उसकी पसली के अनुक्रम में चीरा लगाया. ===============

***तकनीकी का सारहीन प्रदर्शन:***

उस श्याम की घटनाएँ मेरे दिमाग में घूमती रही. यहाँ तक कि उसके बिना भी मुझे संदेह था कि मैं एक शल्य-चिकित्सक हूँ. किन्तु उन्होंने पूरे प्रयासों पर पर्दा डाल दिया. जो कुछ भी इतना वीरोचित लगा रहा था, स्वयं के चाहने केलिए तकनीकी प्रदर्शन एक तरह का हठधर्मी और सारहीन लगा.

 इस तरह का पहला प्रदर्शन सर्जरी केलिए अनूठा लगा. जैसे ही मैंने मेरी चिकित्सकीय पढ़ाई पूरी की और मेरी अंतरंग डॉक्टरी इंटर्नशिप और रेजीडेंसी पूरी की, तो मैंने इसी तरह की घटनाएँ अनेक शाखाओं - आन्तरिक चिकित्सा,बाल-चिकित्सा,तंत्रिका विज्ञान और कैंसर विज्ञान में देखी. समय-समय पर अनेक ऐसे मामलों में जहाँ जीवित रहने की कोई आशा नहीं थी. इन सबसे मैंने यह समझ लिया था कि यह सब कोई स्वायत परिघटना नहीं है अपितु वर्तमान में जो कुछ भी चिकित्सा क्षेत्र में चल रहा, उसका एक प्रतिबिम्ब है.

 बेशक, कुछ ऐसी परिस्थितियां होती हैं जहाँ आक्रामक इलाज विवेकसम्मत होता है. जहाँ कहीं जिन्दा रहने की आशा है,वहां इलाज को रोकना हमेशा कठिनाई से भरा हुआ है. और आपातकाल में यह हमेशा ठीक रहता है कि पहले काम करो और फिर प्रश्न करो. कभी-कभी कठोर निर्णय लेने के प्रशिक्षण से जुड़े हुए कारण रहते हैं ताकि इंटर्नशिप और रेजीडेंट डॉक्टर सीख सके कि बहुविध तंत्र के विफल होने की स्थिति में क्या करना व्यवहारसम्मत और बेहतर है. कभी-कभी नई दवाइयों या तकनीकी का प्रयोग करने केलिए भी ऐसा किया जाता है. मैं सोचता हूँ कि कभी-कभी यह एक अवचेतन में यह भय भी रहता है कि वकील गलत ईलाज से जुड़ी संभावनाओं के इर्दगिर्द परिजनों और चिकित्सकों को परेशान करेंगे. और ऐसे भी मामले होते हैं जहाँ अपना निजी मुनाफा कमाने केलिए गैर-जरुरी जाँच करवाने जैसे अनैतिक कार्य करते हैं. किन्तु अनेक टर्मिनल स्थितियों में, जाँच की आड़ में बिना किसी स्पष्ट कारण के भी इलाज़ जारी रखा जाता है. अस्पताल का तंत्र उसको चलाने केलिए सक्रिय रहता है.

 ये सबसे अधिक विस्मयकारी स्थितियां हैं. कुछ कारण से हम चिकित्सक भी यह नहीं जानते हैं कि कैसे इलाज़ नहीं करना है, कैसे पहले इंकार करना है,पीछे कैसे जाना है और प्रकृति को अपने तरीके से काम कैसे करने देना है. उदाहरण केलिए, निमोनिया के शिकार रोगी का इलाज रोक देना एक तरह की लापरवाही जैसा लगता है. यहाँ तक कि भले ही यह दया हो. इसी प्रकार कैंसर के रोगी की दवाइयों को ताक पर रख देना अपराध जैसा लगता है.

 कुछ मात्रा में, तकनीकी के उपयोग की यह सनक हमारी संस्कृति का पूर्वाग्रह दर्शाती है. किन्तु इसका दोषारोपण पूरी तरह से संस्कृति पर लगा देना भी एक बड़ी गलती होगी. क्योंकि यह समस्या चिकित्सकीय पेशे की कार्यप्रणाली से जुड़ी हुई है. पिछली कुछ सदी से चिकित्सा क्षेत्र क्लीनिकल अनुशासन के साथ ज्यादा विकसित हुआ है जो रोग का निरीक्षण विज्ञान आधारित पेशे- जिसमें आंकड़ों का संग्रहण, विभिन्न अंगों के कार्यों की गहन निगरानी और ये सभी बीमारी के आक्रामक उपचार हैं. चिकित्सकीय क्षेत्र में तकनीकी का उपयोग गहन जाँच में उपयोगी है. यह अतिउपयोग और अतिउपचार का पुरुस्कार है. और सबसे ख़राब स्थिति यह पूरे डॉक्टर समुदाय को विशेष ढ़ंग से सोचने, काम करने एवं व्यवहार करने केलिए पक्का करती हैं जो कई बार रोगी की देखरेख केलिए हानिकारक है.

 मेरा स्वयं का अनुभव पाठ्यक्रम के अनुभव का उदाहरण है. मैंने मेरा प्रशिक्षण एक ऐसे चिकित्सा केंद्र से लिया है जो स्वयं को उच्च एवं विशिष्ट सेवाएँ देने केलिए अपने आप पर गर्व करता है. किन्तु उच्च चिकित्सा केंद्र से मेरी उत्कृष्ट औपचारिक शिक्षा के बावजूद भी असंख्य ऐसे अनौपचारिक पाठ हैं जो अक्सर खराब उपचार के उदाहरण बनते हैं.

***तकनीकी लाभ--***

पहला पाठ रोगी के सिरहाने पड़ी प्रयोगशाला की चार्ट-पत्रक थी. हर दिन प्रत्येक रोगी के चार्ट में प्रयोगशाला में होने वाली जांचों का नये कंप्यूटरिकृत रिकार्ड दर्ज हो जाते हैं. इसमें जब से रोगी भर्ती हुआ है तब से की गई सभी जांचों का रिकार्ड रहता है. जो रोगी हफ्ते-दस दिन केलिए भर्ती होते हैं, उनकी रिपोर्ट 30 से 40 पेज की होती है. इसमें अच्छी बात यह है कि रिकार्ड की गई जांचों के आधार पर इलाज करना सहुलियत देता है.

दूसरा पाठ जिसे मैं अक्सर कामना करता है. जिसे मैं ज्यादा सीख सकता हूँ वह यह है कि तकनीकी से लाभ होता है. तकनीकी लोगों को अनुदान पदोन्नति और अधिकार देती है. चिकित्सा क्षेत्र में शक्ति प्राप्त करने का पुख्ता रास्ता तकनीकी में दक्षता है. मुझे याद है मेरे मनोचिकित्सा कार्यक्रम में एक रेजिडेंट डॉक्टर जिसने इस पाठ को बहुत ही अच्छे ढंग से सीख लिया था. जब उसने सुना कि हमारे चिकित्सा केंद्र ने NMR स्कैनर (Scanner) प्राप्त किया है, प्रायोगिक निदान सूचक उपकरण, जिसने इस नयी मशीन और मनोरोग विज्ञान में उसके संभावित महता के बारे में जितना सीख सकता था, उसने सीख लिया. वह उस नयी मशीन पर अनुसंधान और निरीक्षण करने केलिए नवाचार तक लिख देने का माध्यम बन गया. उसकी इस संबंधता ने उसे इस उपकरण के नियंत्रण की शक्ति दी और धीरे-धीरे उसे इस पर पेपर प्रकाशित करने योग्य बना दिया, जो उसको दूसरे मनोचिकित्सकों से ज्यादा आगे तक ले जाता है.

 इसके अतिरिक्त, तकनीकी अपने अनुयायियों को अच्छी प्रतिपूर्ति करती है. बाल चिकित्साक से ज्यादा संवेदनाहरणविशेषज्ञ (Anesthesiologist) को महत्वपूर्ण बना देती है. और एक आन्तरिक रोग विशेषज्ञ जो रोग की पहचान करने में ज्यादा कार्य दक्षता रखता है वह उस आन्तरिक रोग विशेषज्ञ से ज्यादा कमाता है जो केवल थोड़ा ही जानता है.

तीसरा पाठ बहुत स्पष्ट नहीं है किन्तु व्यवहार में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है. वह यह है कि प्रत्येक व्यक्ति का उपचार करना चाहिए. यह जानने के बावजूद भी कि एक रोगी के ठीक होने के अवसर अधिक हैं जबकि दूसरे के लिए केवल उसके अंतिम समय के दर्द को कम करने केलिए सब कुछ करना है. किन्तु हमारी दृष्टि सभी केलिए सब कुछ करना है, होनी चाहिए. पीछे जाना हमारे लिए बेहद कष्टप्रद है, यह जानते हुए भी कि रोगी क्या चाहता है.

 इसी तरह का एक ओर पाठ आज के दौर में सिखाया जाता है. इसमें पहला बड़ा सिंहावलोकन 1932 में अमेरिकन चिकित्सा कालेज के एसोसिएशन पैनल के एम.डी.डिप्लोमा के डॉक्टरों ने अपने अध्ययन में पाया कि चिकित्सा विधार्थियों को बुनियादी कौशल की कीमत पर तकनीकी और विज्ञान द्वारा स्वाह किया जा रहा है. विशेषज्ञता और तकनीकी और ज्ञान का उन्नत होता तीव्र सोपान, अध्यापक और विधार्थी दोनों का ही ध्यान चिकित्सा के केन्द्रीय प्रयोजन- जो बीमारी को ठीक करना और रोगी को दर्द से मुक्ति दिलाना है, की बजाय ज्यादा आकर्षित करता है.

 डॉक्टरों के मनोभाव के साथ-साथ तकनीकी का अतिउपयोग उपभोक्ता अर्थात् रोगी और उसके परिवारजन द्वारा किया जाना है. तकनीकी वैसा ही उद्देश्य पूरा करती हैं जैसे किसी के कोई धार्मिक रीति-रिवाज पूरा करते हैं. धार्मिक-अनुष्ठान- भेंट चढ़ाने, मोमबती जलाने या प्रार्थना करने से ज्यादा तकनीकी उम्मीद संप्रेषित करती है. मरते हुए रोगी को प्रयोगशाला की जांचे और CAT स्कैन ठीक होने के प्रतीक माने जाते हैं. और दवाइयां खिलाना अथवा व्यर्थ का आपातकालीन ऑपरेशन करना राहत की एक निश्चित मात्रा प्रदान करते हैं. परिवारजनों को भी इस सोच से सांत्वना मिलती है कि “प्रत्येक चीज जो की जा सकती है उसे करना चाहिए”. गहन चिकित्सा प्रेम की तरह ध्वनित होती है. इसलिए, मरता हुआ रोगी मॉनीटर्स, कैथटरों और रेसपीरेटरों से घिर जाता है.

 ***मशीनों के पीछे ताड़ना:***

तकनीकी अक्सर कठिन मुद्दों को हल करने तथा दर्द को कम करने में ध्यान-भंग करने के रूप में उपयोग ली जाती है. मेरी इंटर्नशिप के दौरान ऐसा एक मरते हुए वृद्ध जो कि पेट के कैंसर से पीड़ित था, के साथ ऐसा हुआ. जोनसन मेरे अस्पताल में अंतिम अवस्था में आया. किन्तु हमने उसके मर जाने से पहले भरसक प्रयास किये: सिर व शरीर का CAT स्कैन किया, नरम एवं कठोर ऊतक का एक्स रे किया, शरीर का उपलब्ध तरल इकठ्ठा किया. उसने इन सब जांचों केलिए कुछ दिन विकिरण-चिकित्सा केलिए इंतजार किया. वह आश्वस्त था कि हम उसे ठीक कर देंगे. वह चिकित्सा-पद्धति में पूर्ण आस्था रखता था. वह कैंसर विरोधी दवाइयों के एक प्रारूप(रेजिमन) : के दुष्प्रभाव के बिना पहले से ही निकल चुका था, हमने उसको दूसरा आनुभाविक रेजिमन (प्रारूप) दिया. जब यह भी विफल हो गया तो तीसरा चालू किया. सबसे कठिन काम इस दौरान उसको होनेवाला दर्द नहीं था और न ही उसकी बीमारी की पीड़ा थी अपितु जांचों केलिए लम्बा इंतजार और रसायन-चिकित्सा(chemotherapy) से होने वाला भयानक दर्द था. जब उसके iv के द्वारा दवाइयां गई तो वह भयंकर चिल्लाया. अंतिम दिन या जिस दिन उसने महसूस किया कि उसके इन सबसे कोई प्रभाव नहीं पड़ रहा है, तब उसने चिलाना शुरू किया कि हम उसे मार रहे हैं. उसको सांत्वना देने का हमारे पास कोई उपाय नहीं था.

 बेशक, वह गलत था. हम उसे मारना नहीं चाहते थे किन्तु हम उसके कुछ हित में भी नहीं कर पाये. हमने केवल उसकी पीड़ा और खर्चे को बढाया और तकनीकी के इलाज से भ्रमित किया. संभवत: हम, उसके चिकित्सक, अपने आपको भी भ्रमित ही कर रहे थे. कैंसर चिकित्सक ये भलीभांति जानते थे कि वे जोनसन को नहीं बचा पाएंगे. किन्तु कोई इसे स्वीकार करने को तैयार नहीं था. यही समस्या है. चिकित्सा तकनीकी की तमाम तरह की वचनबद्धता के बावजूद भी, नाजुक क्षणों में, हम मेसे बहुत से यह स्वीकार करने में शर्म महसूस करते हैं कि हम कैसे विस्मयकारी ढंग से बेबस हैं.

 तकनीकी एक और उद्देश्य पूरा करती है. वह है संप्रेषण का. ऐसी कोई भाषा नहीं है जो डॉक्टरों को इतने संक्षेप में इतनी बड़ी सूचना दे दे. अस्पतालों में भाषा अंगरेजी शब्दों की नहीं है अपितु CAC स्कैन और श्वांस तंत्र है. बहुत से रोगी जॉनसन की तरह गलत ढंग से इन आवाजों से आश्वस्त हो जाते हैं कि जब वे जानते हैं तब तक जानने का कोई अर्थ नहीं रह जाता है.

 तकनीकी चाहे संप्रेषण, अनुष्ठान, आदत या बचाव के रूप में काम लें, प्राय: बुनियादीतौर पर कपटी प्रयोजनों को ही साधती है. यह महंगी, खर्चीली और संप्रेषण में मशीनों के माध्यम से अमानवीय हैं. और हाल ही के महिला अस्पताल और बोस्टन के चिकित्सकों के अध्ययन से सामने आया कि यह डॉक्टरों की बीमारी को पहचानने की क्षमता को भी नहीं सुधारती है. अध्ययन यह सुनिश्चित करने केलिए किया गया था कि नये निदान यंत्र डॉक्टरों को अपनी गलतियों से सीखने में मददगार उपकरण बनते हैं या नहीं. निरीक्षणकर्ताओं ने अध्ययन में पाया कि उनके अस्पताल में 1960,70 और 80 में 100 मामले शव-परीक्षा के आये और उन्होंने देखा कि तकनीकी की अमोधकता के इतना उपयोग करने के बावजूद निदान का प्रतिशत कमोबेश तीनों वर्षों में वही था.

***कैसे सुना जाये, को सीखना:***

तब फिर, मशीनों के अतिउपयोग की इस तकनीकी उलझन का क्या उपाय किया जाये? विडम्बना ही है कि =========

***दल का नजरिया---***

मैं यह भी सोचता हूँ कि यह जरूरी है कि हम चिकित्सकीय क्षेत्र में हम निर्णयों को उसी रूप में प्रभावित करते हैं जिस रूप में वे बने हैं. अधिकतर अस्पताल पेशेवरों का समूह रखते हैं जो रोगी की देखरेख का मूल्यांकन करते हैं. किन्तु ये उपयोग-समीक्षा कमेटियां अतिउपचार संबंधी समस्याओं के निदान में बहुत प्रभावशाली नहीं हैं. वे वस्तुतः यह सुनिश्चित करते हैं कि सक्रिय उपचार या जाँच ठीक तरीके से हो रही है कि नहीं. वे बहुत निकटता से नहीं देखते हैं कि उनकी जरूरत भी है या नहीं. वस्तुतः ये कमेटियां कभी-कभी डॉक्टरों के बीच अत्यधिक सक्रिय पागलपन को उत्साहित करते हैं जो यहाँ तक भी नहीं जानते हैं कि कोई रोगी विशेष अस्पताल में भर्ती है या नहीं.

 टीम के नजरिय की जगह मैं क्या प्रस्तावित करता हूँ. टीम चिकित्सकीय पेशेवरों का एक ऐसा समूह है जो रोगी की देखभाल में तकनीकी के उपयोग के मूल्यांकन हेतु नियमित रूप से अस्पताल में दौरा करती है. इस तरह की टीम दर्द टीम के समान है. मैं एक ऐसे अस्पताल को जानता हूँ जो अंतिम अवस्था के कैंसर रोगियों को दर्द से राहत देने की सबसे उत्तम दृष्टि का मूल्यांकन करता है. टीम इंटर्नशिप डॉक्टरों, मनोरोग-चिकित्सकों, तंत्रिका चिकित्सकों, सामाजिक कार्यकर्ताओं और नर्स को शामिल रखती है. इसी तरह से, तकनीकी मूल्यांकन टीम भी इंटर्नशिप चिकित्सकों, गहन चिकित्सा विशेषज्ञों, मनोरोग विशेषज्ञों, नर्सों और कुछ रोगी के वकालत करनेवालों से बनना चाहिए. टीम के सदस्यों को चिकित्सक और रोगियों के साथ काम करने और उनको तकनीकी के बेहतर और उचित उपचार प्रयोजनों को सुनिश्चित करने में मदद देनी चाहिए. ऐसी टीम चिकित्सकीय तकनीकी का उनके सही उपयोग को करने में मदद करनी चाहिए. किन्तु अविश्वसनीय उपकरण है. यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि कुछ चिकित्सक इस तरह की टीम को अपने प्राधिकार केलिए चुनौती मानते हैं या परेशानी के संभावित स्रोत के रूप में देखते हैं. किन्तु मैं सोचता हूँ कि बहुत से कठिन क्लिनिकल निर्णयों को लेने में सहायक होने के रूप में भी लेते होंगे.

 मेरी इंटर्नशिप डॉक्टरी की समाप्ति का एक और अंतिम उदाहरण देता हूँ. मेरे अस्पताल में मिस्टर स्टोन गंभीर दिल के दौरा का मरीज भर्ती हुआ. दवाइयों की ज्यादा खुराक देने के बाद भी उसके शरीर से अतिरिक्त तरल बह रहा था. वह लगभग श्वांस लेने में अक्षम था; उसके फेफड़ों को केवल अंत:शिरा (Lasix) देकर जो पेशाब के बहाव को तेज करती है और फेफड़ों को साफ रखती है, साँस लेने में सक्षम था. मैं सदमें में आ गया जब उसने ह्र्दय चिकित्सक डॉ. इवान ने एक श्याम मुझे यह कहते हुए एक तरफ कर दिया कि मैंने lasix देना बंद कर दिया. इवान ने कहा कि स्टोन और अधिक नहीं जी सकता. ========

 और स्टोन की पत्नी अपने पति की बीमारी के कारण पीड़ा में थी. मैं इसे नहीं देख सकता हूँ. यह केवल हर रोज lasix का फुवारा है .इसलिए, मैंने जारी रखा और स्टोन को साँस लेने में ओर अधिक कठिनाई होने लगी. स्टोन हररोज अपने बिस्तर के एक तरफ बैठ जाता था. दर्द. इसलिए एक दिन मैंने निश्चित किया कि मैं हास्यस्पद के रूप में वही किया जो डॉक्टर इवान ने सुझाया था. स्टोन मर गया. उसकी पत्नी चिलाई, मुझे धन्यवाद दिया और चली गई.

 मैं जनता था कि मैंने ठीक किया है. यद्धपि, मैं विचित्र महसूस कर रहा था क्योंकि मैंने जाना कि यदि मैं चाहता तो मैं उसके ह्र्दय को लम्बी अवधि तक चालू रख सकता था. यह बहुत ही असंगत था. लम्बे प्रशिक्षण के बाद मैं यह जाना कि एक तरफ हो जाओं और प्रकृति को अपना काम करने दो.

***संदर्भ ====***

***ऐच्छिक और अनेच्छिक इच्छा मृत्यु:***

पहली बार 1979 में स्विजरलैंड के चिकित्सा में मृत्यु चाहने वाले रोगियों को प्राणघातक इंजेक्शन दवाइयां दे सकता था. इसके तीस वर्ष बाद नीदरलैंड, बेल्जियम,अमेरिकन राज्यों में ऐच्छिक इच्छा मृत्यु और अथवा चिकित्सकों की सहायता से आत्महत्या क़ानूनी रूप से मान्य हुई.

***मृत्यु में सहायक होने के रूप---***

गर्भपात की तरह ‘मृत्यु में सहायता करना’ का विषय काफी विवादास्पद है जिसमें राजनैतिक स्वार्थ इसकी मूलभावना को और भी विकृत करते हैं. बहस का विषय यह है कि यदि रोगी डॉक्टर से मरने में मदद केलिए कहता है तो डॉक्टर को इसकी स्वीकृति देनी चाहिए कि यदि वह जो निर्देशित करता है, यदि रोगी लेता है तो रोगी की जिन्दगी का अंत मानवीय और सरल ढंग से हो सकेगा. इसे आमतौर पर ‘चिकित्सकीय सहायता से आत्महत्या’ मानते हैं जो गरिमा के साथ मरना अथवा मरने में सहायता करना के विपरीत है.

 ***ऐच्छिक इच्छा मृत्यु:***

ऐच्छिक इच्छा मृत्यु में रोगी एक ऐसे रोगी की प्रार्थना होती है जो मानसिक रूप से सक्षम और पर्याप्त रूप से सूचित हो. इच्छा मृत्यु तब भी ऐच्छिक हो सकती है जब रोगी मृत्यु के कक्ष में मानसिक रूप से सक्षम नहीं है. किन्तु जब वह व्यक्ति अच्छी स्वास्थ्य दशा में था तब उसने लिखित में प्रार्थना की हो कि विशेष दशाओं में जब वह मानसिक रूप से भी स्वस्थ नहीं तो भी वह मरने की इच्छा कर सकती है. ऐसे व्यक्ति जिन्होंने ने पहले से ही इच्छा मृत्यु की प्रार्थना कर रखी है, को समय-समय पर वापस पक्का करते रहते हैं.

 1980 के दौर में नीदरलैंड में अदालती मामलों की एक श्रंखला चली जो रोगी को करने में डॉक्टर ह्सय्क बने. कोर्ट ने डॉक्टर द्वारा प्राणघातक इंजेक्शन स्वयं देने अथवा प्राणघातक दवाई केलिए पर्ची में लिख देने में कोई अंतर नहीं किया. वस्तुतः नीदरलैंड में ज्यादातर चिकित्सकों ने सोचा कि यह ज्यादा अच्चा है कि रोगी मर रहा है उस समय चिकित्सक उपस्थित रहे ताकि वह देख सके कि कुछ गलत तो नहीं हो रहा है. कई बार रोगी प्राणघातक दवाइयों को ले नहीं पाता है ऐसी स्थिति में इंजेक्शन ज्यादा फायदे मंद है. 2002 में डच संसद ने और 2008 में लक्जमबर्ग में ऐच्छिक यूथनेसिया को क़ानूनी रूप से सशर्त मान्यता मिली. निम्न स्थितियों में ऐच्छिक इच्छा मृत्यु दी जा सकती है: यह चिकित्सकों द्वारा दी गई हो, जब रोगी स्पष्ट रूप से इच्छा मृत्यु की प्रार्थना करता हो जहाँ इसमें कोई संदेह नहीं हो कि वह पूरी तरह से अपने निर्णय से सहमत है, सूचित है और उसे महत्व देता है.==========================

 मैं उस इच्छा मृत्यु को अनैच्छिक कहता हूँ जब मरनेवाला व्यक्ति अपनी मृत्यु संबंधी स्वीकृति देने में सक्षम है किन्तु वह ऐसा नहीं करता है क्योंकि उसने पूछा नहीं है अथवा उसने पूछा किन्तु वह अभी जीना चाहता है. ============

 इसमें एक महत्वपूर्ण अंतर है कि किसी ऐसे व्यक्ति को मारना जो जीने की इच्छा का चयन करता है और एक ऐसे व्यक्ति को मारना जिसने सहमति नहीं दी है किन्तु पूछा जाये तो वह सहमति देगा. यद्धपि, व्यवहार में, ऐसे मामलों की कल्पना करना कठिन है जिसमें एक व्यक्ति सहमति देने में सक्षम है और पूछने पर सहमति दे सकता है किन्तु कहा/पूछा नहीं जाता है. क्यों नहीं कहा जाता है? केवल बहुत ही कठिन स्थिति में==========

 किसी को मारना जिसने करने की सहमति नहीं दी है तब इच्छा मृत्यु कही जाती है जब मारने का प्रयोजन मरनेवाले व्यक्ति की असहनीय पीड़ा को रोकने की इच्छा हो. =========

***अनैच्छिक इच्छा मृत्यु---***

ये ऊपर दी गई दो परिभाषाएँ एक तीसरे प्रकार की इच्छा मृत्यु केलिए भी स्थान छोडती है. यदि कोई व्यक्ति जीवन और मरने के बीच चुनाव करने की समझ रखने में असक्षम है तो इच्छा मृत्यु न तो ऐच्छिक और और न ही अनैच्छिक है. वह अन-ऐच्छिक इच्चाम्रित्यु है. ऐसे व्यक्ति जो अपनी यहाँ तक कि असुधार्य बीमारी के चलते भी सहमति देने में सक्षम नहीं है.उदाहरण केलिए, अक्षम नवजात बच्चे और ऐसे व्यक्ति जो दुर्घटना में अथवा वृद्दावस्था में इस विषय को समझने में स्थायीतौर पर असक्षम है जिन्होंने इन स्थितियों में इच्छा मृत्यु की प्रार्थना करने अथवा ख़ारिज करने संबंधी पहले की कोई प्रार्थना नहीं रखते हैं. 1978 में, ==========

संदर्भ ===

जबकि बादवाले में, जीवन को बनाये रखनेवाली सहायक क्रियाओं को रोक देते हैं. ( जैसे एंटीबायोटिक दवाइयां) ( भारतीय चिकित्सा आचार संहिता? ) अमेरीकी चिकित्सा आचार संहिता संघ ने इच्छा-मृत्यु के प्रश्न को मान्यता दी और आधिकारिक रूप से उसकी नैतिकता संबंधी मानक दृष्टि दी. यह कहा गया कि निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु नैतिक रूप से स्वीकार्य है (विशेष दशाओं में ) किन्तु सक्रिय इच्छा-मृत्यु कभी भी स्वीकार्य नहीं है. कुछ व्यक्ति सक्रिय बनाम निष्क्रिय इच्छा-मृत्यु में भिन्न दृष्टि से अंतर करते हैं. वे इच्छा-मृत्यु पद का उपयोग एक कार्य केलिए करते हैं.